वीर ज्ञानोदय ग्रन्थमाला का पुष्प नं.247

भगवान मुनिसुव्रतनाथ की जन्मभूमि

राजगृही तीर्थ परिचय

-लेखक-

पीठाधीश क्षुल्लक श्री मोतीसागर जी महाराज

-प्रकाशक-
दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान
जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर (मेरठ) उ.प्र.
फोन नं.- (01233) 280184, 280236

प्रथम संस्करण	मगशिर शुक्ला पंचमी	मूल्य
2200 प्रति	28 नवम्बर 2003	तीर्थ भक्ति

दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान द्वारा संचालित

वीर ज्ञानोदय ग्रंथमाला

इस ग्रन्थमाला में दिगम्बर जैन आर्षमार्ग का पोषण करने वाले हिन्दी संस्कृत, प्राकृत, कन्नड़, मराठी आदि भाषाओं के न्याय, सिद्धान्त अध्यात्म, भूगोल-खगोल, व्याकरण आदि विषयों पर लघु एवं वृहद् ग्रन्थों का मूल एवं अनुवाद सहित प्रकाशन होता है। समय-समय पर धार्मिक लोकोपयोगी लघु पुस्तिकाएं भी प्रकाशित होती रहती हैं।

संस्थापिका एवं प्रेरणास्रोतः-
परम पूज्य गणिनीप्रमुख आर्यिकाशिरोमणि
श्री ज्ञानमती माताजी
समायोजनः-
प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका श्री चन्दनामती माताजी
निर्देशनः-
धर्मदिवाकर पीठाधीश क्षुल्लकरत्न श्री मोतीसागर जी
सम्पादकः-
कर्मयोगी ब्र. रवीन्द्र कुमार जैन
सर्वाधिकार प्रकाशकाधीन

कम्पोजिंग-ज्ञानमती नेटवर्क
जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर(मेरठ) उ.प्र.

ॐ

राजगृही में जन्मे
भगवान मुनिसुव्रतनाथ

भगवान ऋषभदेव की तीर्थंकर परम्परा में 20वें तीर्थंकर भगवान मुनिसुव्रतनाथ हुए हैं, जिन्होंने आज से ग्यारह लाख वर्ष पूर्व बिहार प्रान्त की राजगृही नगरी में जन्म लिया। राजगृही नगरी के महाराजा सुमित्र की महारानी सोमा ने एक दिन रात्रि के पिछले प्रहर में ऐरावत हाथी, उत्तुंग बैल आदि सुन्दर-सुन्दर सोलह सपने देखे। प्रातःकाल पतिदेव से उनका फल पूछने पर ''आप तीर्थंकर पुत्र को जन्म देंगी।'' ऐसा जानकर वे

बहुत हर्षित हुईं, श्रावण कृ. 2 को इन्द्रों ने भगवान मुनिसुव्रतनाथ का गर्भकल्याणक महोत्सव मनाया तथा भगवान के गर्भ में आने के छह महीने पहले से ही सौधर्म इन्द्र की आज्ञा से कुबेर ने माता सोमा के आंगन मेंरत्नों की वर्षा प्रतिदिन करना प्रारंभ कर दिया।

वैडूर्यमणि के समान मनोहर वर्ण वाले, हरिवंशशिरोमणि भगवान मुनिसुव्रतनाथ ने वैशाख कृष्णा द्वादशी को जन्म लिया। देवों ने भगवान् का सुमेरु पर्वत पर अभिषेक करके ''मुनिसुव्रत'' नामकरण किया। इनकी आयु तीस हजार वर्ष एवं ऊँचाई बीस धनुष (80 हाथ) की थी। इनका चिन्ह कछुआ माना गया है।

कुमार काल के सात हजार पाँच सौ वर्ष बीत जाने पर भगवान का राज्याभिषेक हुआ। राज्यावस्था में प्रभु के पन्द्रह हजार वर्ष बीत

जाने पर किसी दिन गरजती हुई घनघटा के समय उनके मुख्य हाथी ने वन का स्मरण कर खाना-पीना बंद कर दिया। उस समय महाराज मुनिसुव्रतनाथ अपने अवधिज्ञान से उस हाथी के मन की सारी बातें जान गए। वे कुतूहल से भरे मनुष्यों के सामने हाथी का पूर्वभव कहने लगे कि यह हाथी पूर्वभव में तालपुर नगर का नरपति– राजा था। अपने उच्चकुल के अभिमान से इसने अशुभलेश्याओं से सहित, मिथ्याज्ञानी, पात्र-अपात्र की परीक्षा से रहित किमिच्छक दान दिया था, उसके फलस्वरूप यह हाथी हुआ है। इस समय भी यह अपने अज्ञान आदि का स्मरण न करता हुआ वन का स्मरण कर रहा है। इतना सुनते ही उस हाथी को अपने पूर्वभव का स्मरण हो गया और उसने प्रभु से देशसंयम ग्रहण कर लिया।

इसी निमित्त से प्रभु को वैराग्य हो गया

और लौकांतिक देवों द्वारा पूजा को प्राप्त भगवान अपराजिता नामक पालकी पर बैठकर नीलवन में पहुँचे। वहाँ चम्पक वन के नीचे वैशाख कृष्णा दशमी के दिन श्रवणनक्षत्र में एक हजार राजाओं के साथ दीक्षित हो गए। उनकी प्रथम पारणा का लाभ राजगृह के (राजगृही के एक उपनगर के) राजा वृषभसेन को प्राप्त हुआ था।

छद्मस्थ अवस्था के 1 वर्ष व्यतीत होने पर वैशाख कृष्णा नवमी के दिन श्रवण नक्षत्र में प्रभु को केवलज्ञान प्रगट हो गया। समवसरण में दिव्य धर्मोपदेश करते हुए भगवान की आयु जब 1 माह की शेष रही तब वे सम्मेदशिखर पर जा पहुँचे। वहाँ फाल्गुन कृष्णा द्वादशी के दिन रात्रि के पिछले भाग में अघातिया कर्मों का नाशकर सिद्ध परमात्मा हो गये। भगवान मुनिसुव्रतनाथ वर्तमान वीर नि.सं. 2530 से 11,56,530 वर्ष

पहले मोक्ष गये हैं। इन मुनिसुव्रत्माथ भगवान को मेरा नमस्कार होवे।

विपुलाचल पर्वत पर भगवान महावीर की प्रथम दिव्यध्वनि खिरी –आज से 2602 वर्ष पूर्व भगवान महावीर ने महाराजा सिद्धार्थ की महारानी त्रिशला से कुण्डलपुर (नालंदा) के नंद्यावर्त महल में चैत्र शु. 13 को जन्म लिया था। 30 वर्ष की आयु में मगशिर कृ. 10 को उन्होंने दीक्षा धारण की, पुनः वैशाख शु.10 के दिन भगवान को दिव्य केवलज्ञान की प्राप्ति हो गई। केवलज्ञान होने के पश्चात् भगवान का समवसरण बन गया था किन्तु उन की दिव्यध्वनि नहीं खिर रही थी। जब प्रभु का श्रीविहार होता तब समवसरण विघटित हो जाता था एवं प्रभु का श्रीविहार आकाश में अधर होता था। देवगण भगवान के चरणकमलों के नीचे-नीचे स्वर्णमयी

सुगंधित दिव्य कमलों की रचना करते रहते थे पुनः जहाँ भगवान रुकते, अर्धनिमिषमात्र में कुबेर आकाश में अधर ही समवसरण बना देता था। छ्यासठ दिन तक मौन से विहार करते हुए श्री वर्धमान जिनेन्द्र जगत्प्रसिद्ध राजगृही नगरी आए। वहाँ जिस प्रकार सूर्य उदयाचल पर आरूढ़ होता है उसी प्रकार लोगों को प्रतिबद्ध करने के लिए समवसरण लक्ष्मी के स्वामी भगवान विपुलाचल पर्वत पर आरूढ़ हुए।

जब इन्द्रराज ने देखा– भगवान को केवलज्ञान होकर 65 दिन व्यतीत हो गए फिर भी उन की दिव्यध्वनि नहीं खिर रही है क्या कारण है? चिन्तन कर यह पाया कि गणधर का अभाव होने से ही दिव्यध्वनि नहीं खिरी है। तब सौधर्मेंद्र इन्द्रभूति ब्राह्मण को इस योग्य जानकर उस अभिमानी को युक्ति से समवसरण में ले

आया वहाँ मानस्तम्भ को देखते ही गौतम का मान गलित हो गया और उन्हें सम्यक्त्व प्रगट हो गया। समवसरण के सारे वैभव को देखते हुए महान् आश्चर्य को प्राप्त उन्होंने भगवान महावीर स्वामी का दर्शन किया और भक्ति में गद्‌गद होकर "जयति भगवान् .....इत्यादि स्तुति करने लगे। स्तुति करके विरक्तमना होकर उन इन्द्रभूति ने प्रभु के चरण सानिध्य में जैनेश्वरी दीक्षा ले ली तत्क्षण ही उन्हें मति-श्रुत ज्ञान के साथ ही अवधिज्ञान और मनःपर्ययज्ञान प्रगट हो गया। वे गणधरपद को प्राप्त हो गए तभी भगवान की दिव्यध्वनि खिरी थी।

गौतम स्वामी का परिचय –आर्यखण्ड में बिहार प्रान्त के कुण्डलपुर के निकट ब्राह्मण नामक एक नगर था। वहाँ शांडिल्य नाम के ब्राह्मण रहते थे इनके तीन पुत्र थे जो कि

सर्ववेदवेदांग के ज्ञाता थे। इन तीनों के इन्द्रभूति, अग्निभूति और वायुभूति नाम प्रसिद्ध थे। इन्द्रभूति-गौतम ब्राह्मण किसी ब्रह्मशाला में पाँच सौ शिष्यों के गुरू थे। गौतम गोत्र होने के कारण ये गौतम स्वामी के नाम से प्रसिद्ध हुए हैं। भगवान महावीर को केवलज्ञान होने के पश्चात् 66 दिनों के बाद इन्हीं गौतम स्वामी के निमित्त से उनकी दिव्यध्वनि खिरी थी।

तत्पश्चात् जब कार्तिक कृष्णा अमावस को भगवान महावीर निर्वाण को प्राप्त हुए उसी दिन शाम को गौतम स्वामी को केवलज्ञान प्राप्त हो गया। उत्तरपुराण में लिखा है –

"जिस दिन भगवान् महावीर स्वामी को निर्वाण प्राप्त होगा, उसी दिन मैं केवलज्ञान प्राप्त करूँगा।" श्री गौतम स्वामी द्वारा रचित चैत्यभक्ति, वीरभक्ति, दैवसिक प्रतिक्रमण, पाक्षिक प्रतिक्रमण, श्रावक प्रतिक्रमण ये पाँच महामूल्यवान रचनाएं दिगम्बर

जैन सम्प्रदाय में आज भी उपलब्ध हैं और प्रसिद्ध हैं। उन गौतम स्वामी को मेरा बार-बार नमन।

समवसरण की महिमा – आज से लगभग 2570 वर्ष पूर्व जब भगवान महावीर स्वामी का समवसरण विपुलाचल पर्वत पर आया था। लाखों-लाख नर-नारियों की भीड़ के साथ, एक मेंढक भी भगवान की भक्ति में गद्‌गद होकर मुख में कमल की पांखुड़ी दबाकर दर्शन को चल पड़ा। राजा श्रेणिक भी अपने हाथी पर बैठकर पूरे वैभव के साथ भगवान का दर्शन करने जा रहे थे। रास्ते में वह मेंढक राजा श्रेणिक के हाथी के पैर के नीचे दबकर मर गया और उसी क्षण भगवान की भक्ति के भाव से मरकर स्वर्ग में देव हो गया वहाँ अपने अवधिज्ञान से अपना पूर्वभव जानकर भगवान के समवसरण में आ गया और भक्ति के वशीभूत होकर नृत्य करने

लगा। राजा श्रेणिक ने समवसरण में पहुँचकर उसे देखा तो उन्होंने प्रश्न किया– भगवन्! यह देव इतना प्रसन्न होकर नृत्य क्यों कर रहा है? इसके मुकुट में मेंढक का चिन्ह क्यों बना हुआ है? तब भगवान् की दिव्यध्वनि को गौतम गणधर ने अपने शब्दों में प्रस्तुत किया– हे राजन्! यह देव कुछ देर पहले मेंढक की पर्याय में समवसरण में आ रहा था तुम्हारे हाथी के पैर के नीचे दबकर मरने से स्वर्ग में देव हुआ और वहाँ से पूर्वभव को जानकर यहाँ आया है तथा प्रसन्नमना होकर नृत्य कर रहा है। सुनकर सभी लोग भगवान की भक्ति की महिमा से परिचित हुए।

राजा श्रेणिक –मगधदेश की राजधानी राजगृही में राजा श्रेणिक अपनी धर्म परायणा रानी चेलना के साथ निवास करते थे। रानी चेलना वैशाली के राजा चेटक की पुत्री तथा भगवान

महावीर की माता त्रिशला की छोटी बहन थीं। राजा श्रेणिक बौद्ध धर्मानुयायी थे जबकि रानी चेलना की जैन धर्म में पूर्ण आस्था थी। राजा श्रेणिक रानी चेलना को बौद्धधर्मी बनाना चाहते थे तथा रानी चेलना राजा श्रेणिक को जैनधर्मानुयायी बनाने का प्रयास करती रहती थीं।

एक बार राजा श्रेणिक शिकार के लिए गए हुए थे वहाँ उन्होंने यशोधर मुनिराज को ध्यान में लीन देखा तब धर्मविद्वेष से गुस्से में आकर अपने शिकारी कुत्तों को मुनि पर छोड़ दिया। कुत्ते बड़ी निर्दयता से मुनि को मारने के लिए झपटे,परन्तु मुनिराज की तपश्चर्या के प्रभाव से वे उनका कुछ भी नहीं बिगाड़ सके बल्कि उनकी प्रदक्षिणा देकर उनके चरणों के समीप खड़े हो गए। यह देख श्रेणिक ने और भी क्रोधित होकर मुनिराज पर बाण चलाना शुरू कर दिया, परन्तु यह कैसा आश्चर्य! वे बाण उन्हें कुछ भी क्षति न पहुँचाकर

ऐसे जान पड़ते थे मानो किसी ने उन पर पुष्पवर्षा की है! पुनः श्रेणिक ने उनके गले में मरा हुआ सर्प डाल दिया। सर्प डालते ही उन्होंने सातवें नरक की आयु का बंध कर लिया।

वापस आकर उन्होंने एक दिन बाद रानी चेलना से सारी बात बताई। सुनकर वह बहुत दुःखी हुई और राजा श्रेणिक को बहुत कुछ समझा-बुझाकर मुनिराज के समीप लाई। मुनिराज पूर्ववत् ध्यान में लीन थे, सर्प के कारण चीटियाँ उनके शरीर पर चढ़कर उन्हें कष्ट पहुँचा रही थीं। रानी ने बुद्धिपूर्वक सर्प को हटाकर चीटियों को भी हटाया पुनः बार-बार नमोस्तु करके मुनिराज के सम्मुख बैठ गईं। ध्यान समाप्त करने पर मुनिराज ने आंखें खोलीं। दोनों ने मुनिराज को नमस्कार किया, तब मुनिराज ने ''सद्धर्मवृद्धिरस्तु'' कहकर दोनों को समान आशीर्वाद दिया। यह देखकर राजा श्रेणिक को बहुत पश्चात्ताप हुआ और उन्होंने

बार-बार मुनिराज से क्षमायाचना करते हुए सम्यग्दर्शन ग्रहण कर लिया। तदनन्तर किसी समय जब भगवान महावीर का समवसरण राजगृही नगरी में आया तब राजा श्रेणिक ने उनके समवसरण में जाकर खूब भक्ति की तथा उन्होंने क्रमशः भगवान के समवसरण में साठ हजार प्रश्न किए। उन्होंने उन उत्कृष्ट परिणामों से अपनी सातवें नरक की आयु को घटा-घटाकर एक समय प्रथम नरक की मध्यम आयु में परिणत कर लिया। इतना ही नहीं समवसरण में भगवान के चरण सानिध्य में उन्होंनेसोलहकारण भावनाओं का चिन्तन करके तीर्थंकर प्रकृति का बंध कर लिया। आने वाली उत्सर्पिणी में इसी अयोध्या नगरी में भविष्यकाल के 24 तीर्थंकरों में से वे ''महापद्म'' नाम के प्रथम तीर्थंकर होंगे।

उन भविष्यत्कालीन महापद्म तीर्थंकर को मेरा बारम्बार नमन।

तीर्थंकर जन्मभूमि विकास की प्रेरणास्रोत

पूज्य गणिनीप्रमुख

श्री ज्ञानमती माताजी का

जीवन परिचय

ब्राह्मी माता के सदृश, ज्ञानमती जी मात।
सदी बीसवीं की प्रथम, क्वांरी कन्या आप।।

वास्तव में हम और आप बहुत ही अधिक सौभाग्यशाली हैं जो कि हमने बीसवीं शताब्दी में जन्म लिया और इस शताब्दी की प्रथम बालब्रह्मचारिणी, युगप्रवर्तिका, युगनायिका, वाग्देवी, चारित्रचन्द्रिका, आर्यिका शिरोमणि, गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी के दर्शनों का, उनके प्रवचनों का, उनके साक्षात् शुभाशीर्वाद

का अवसर प्राप्त किया। हमारे लिए जैनकुल में जन्म लेना सार्थक हो गया क्योंकि यदि हमने जैनकुल में जन्म न लिया होता तो हम ऐसी वात्सल्यमूर्ति माता के दर्शनों से वंचित रह जाते। पूज्य माताजी का हर कार्य आगम के अनुकूल होता है यह बात सारी दुनिया के लोग अच्छी तरह से जान चुके हैं तभी तो उनके द्वारा भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर (नालंदा) के विकास की घोषणा होते ही पूरे देश में खुशी की लहर दौड़ गई।

भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर, भगवान मुनिसुव्रतनाथ की जन्मभूमि एवं भगवान महावीर की प्रथम देशना भूमि राजगृही और भगवान महावीर की निर्वाणभूमि पावापुरी ये तीर्थ त्रिवेणी का संगम है। सम्मेदशिखर जाने

वाले यात्री इन तीनों तीर्थों की वंदना अवश्य करते हैं। कुण्डलपुर आने वाले प्रत्येक यात्री से पूज्य माताजी प्रश्न करती हैं-''राजगृही कौन से तीर्थंकर भगवान की जन्मभूमि है?'' प्रायः कोई भी व्यक्ति इस प्रश्न का उत्तर नहीं दे पाते हैं वे मात्र इतना ही बता पाते हैं कि राजगृही में भगवान महावीर का समवसरण आया था। तब पूज्य माताजी उन्हें बताती हैं–''राजगृही भगवान मुनिसुव्रतनाथ की जन्मभूमि है।'' जन-जन को इस बात की जानकारी प्रदान करने के उद्देश्य से पूज्य माताजी की प्रेरणा से राजगृही में भगवान मुनिसुव्रतनाथ की साढ़े बारह फुट उत्तुंग प्रतिमा स्थापित हुई हैं जिनकी पंचकल्याणक प्रतिष्ठा 3-12-2003 से 8-12-2003 तक पूज्य माताजी के संघ सानिध्य में सम्पन्न हो रही है।

इसी प्रकार भगवान महावीर की निर्वाणभूमि पावापुरी में भी पूज्य माताजी की प्रेरणा से पांडुकशिला परिसर में भगवान महावीर की लालवर्णी सात हाथ अवगाहना प्रमाण खड्गासन प्रतिमा स्थापित हुई हैं उनका भी पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव 28-11-2003 से 3-12-2003 तक पूज्य माताजी के ससंघ सानिध्य में सम्पन्न हो रहा है।

इस प्रकार पूज्य माताजी की प्रेरणा से तीर्थंकर भगवन्तों की जन्मभूमियाँ जैसे– 5 तीर्थंकरों की जन्मभूमि अयोध्या, तीन तीर्थंकरों की जन्मभूमि हस्तिनापुर, भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर आदि विकास के चरमलक्ष्य को प्राप्त हुए हैं तथा अन्य

जन्मभूमियों में भी पूज्य माताजी ने विकासकार्य की प्रेरणा प्रदान की है। 20 तीर्थंकरों की निर्वाणभूमि सम्मेदशिखर में पूज्य माताजी ने जैनधर्म की प्राचीनता को बताने के उद्देश्य से भगवान ऋषभदेव की विशाल पद्मासन प्रतिमा स्थापित करवाई है। मांगीतुंगी, प्रयाग, अहिच्छत्र आदि तीर्थ भी पूज्य माताजी की प्रेरणा प्राप्त कर विशेषरूप से विकसित हो चुके हैं।

इस प्रकार तीर्थंकर जन्मभूमियों के विकास की प्रेरणास्रोत, विश्वविभूति, राष्ट्रगौरव पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी के श्रीचरणों में शत-शत नमन।

भजन

रचयित्री-प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका चंदनामती

तर्ज-मेरे देश की धरती.....

राजगृह नगरी विपुलाचल पर्वत से धन्य हुई है,
राजगृह नगरी..... ।
पच्चिस सौ साठ बरस पहले,
महावीर जहाँ पर आये थे।
उन समवसरण में इन्द्रभूति,
गौतम परिकर सह आये थे।।
बन गये शिष्य प्रभु के,
दिव्यध्वनी तब उनकी खिरी है।।
राजगृह नगरी.।।1।।
श्रावण वदी एकम का वह दिन,
महावीर का शासन दिवस कहा।
जब वीर की दिव्यध्वनि सुनकर,
गौतम गणधर ने ज्ञान लहा।।

इस दिन ही द्वादश अंग रूप,
जिनवाणी रची गई है।।
राजगृह नगरी.।।2।।
है आज भी पावन समवसरण,
विपुलाचल पर्वत पर निर्मित।
महावीर के चरणों से राजगृह,
नगरी का कण-कण वंदित।।
इसलिए ज्ञानमती माताजी की,
दृष्टि प्रसन्न हुई है।।
राजगृह नगरी.।।3।।
प्रभु मुनिसुव्रत की जन्मभूमि,
इतिहास यहाँ का पुराना है।
"चंदनामती" उस पुण्यभूमि को,
विकसित खूब कराना है।।
कुण्डलपुर के निकटस्थ तीर्थ की,
गरिमा वृद्धि हुई है।।
राजगृह नगरी.।।4।।

राजगृही तीर्थ की आरती

रचयित्री-ब्र. कु. सारिका जैन

आरति करो रे,
श्री राजगृही पावन तीरथ की, आरति करो रे।
इस तीरथ पर तीर्थंकर श्री,
मुनिसुव्रत ने जन्म लिया।
अपनी त्याग तपस्या से,
इसके हर कण को धन्य किया।।
आरति करो, आरति करो, आरति करो रे,
माता सोमा के प्रिय नन्दन की, आरति करो रे।।1।।
गर्भ-जन्म-तप-ज्ञान चार,
कल्याणक हुए इसी भू पर।
पितु सुमित्र ने जीवन धन्य
किया तीर्थंकर सुत पाकर।।
आरति करो, आरति करो, आरति करो रे,
इन्द्रों से पूजित नगरी की, आरति करो रे।।2।।

समवसरण महावीर प्रभू का,
आया विपुलाचल नग पर।
छ्यासठ दिन के बाद प्रथम,
देशना खिरी इस ही गिरि पर।।
आरति करो, आरति करो, आरति करो रे,
श्री इन्द्रभूति गौतम गणधर की आरति करो रे।।3।।
समवसरण का दर्शन करके,
चला भक्ति से मेंढक एक।
गज के पैरों से दबकर वह
हुआ उसी क्षण स्वर्ग में देव।।
आरति करो, आरति करो, आरति करो रे,
चमत्कारमय इस भूमी की, आरति करो रे।।4।।
इस ही पावन तीरथ पर,
गणिनी माँ ज्ञानमती जी ने।
मुनिसुव्रत की खड्गासन,
प्रतिमा स्थापित कर दी है।।
आरति करो, आरति करो, आरति करो रे,
"सारिका" सभी मिल भक्ती से, आरति करो रे।।5।।